जैन धर्म में सामाजिक चित्तन

जैनधर्म निरुत्तमांक श्रमण-परम्परा का धर्म है। सामाजिकता इसे सामाजिक न मानक व्यक्तिवादी धर्म माना जाता है, किन्तु जैनधर्म को एकत्ता रूप से व्यक्तिवादी धर्म नहीं कहा जा सकता। यह सत्य है कि उसका विकास निरुत्तमांक श्रमण-परम्परा में ही हुआ है किन्तु मान इस आधार पर उसे असामाजिक या व्यक्तिवादी धर्म मानना, एक अतिकृत हो गया है। जैनम् मुः रूप अथवा दुःख की यथार्थता और
dुःखचित्तन का जीवनार्थः, यह जैन परम्परा का अय और त्रुटि है।
किन्तु मुः और दुःखचित्तन के ये समाज तत्त्व वैतिक नहीं है, उनका एक सामाजिक पल्लव भी है। दुःखचित्तन का उपर्युक्त आदर्श मात्र वैतिक नहीं है, उसका सम्पूर्ण अर्थ नहीं है। अति मुः दुःखचित्तन की चित्तन है और यही उनमें समाज में जोड़ देता है। श्रमणधार्म में धर्म और वैमेंत्र की अभिव्यक्ति माना गया है और धर्म वैमेंत्र की वह अभिव्यक्ति भी उसमें सामाजिक सन्दर्भ को स्पष्ट कर देती है।

भारतीय बिजनेस में सामाजिक चेतना

सामाजिक चेतना के विकास का दृष्टि से भारतीय चित्तन का तीन युगों में बोझा जा सकता है। (१) वैदिक युग, (२) यौनौषधिशालिन युग, (३) जैन और बौद्ध युग। सबसे प्राचीन युग में "संगङ्गवर्मवेगा विचारधमानी" अर्थात् तुम मिलकर चलो, तुम मिलकर बोलो, तुम हारे मात्र साथ-साथ बीत रहे है। इस रूप में सामाजिक चेतना को विकसित करने का प्रयत्न किया गया, तो वही वैदिकशालिन युग में उस सामाजिक एकता की चेतना के लिए दर्शायी आधार अनुभूति किया।

इशारापरंपराओं में ध्यान कहते हैं कि जो सभी आदर्शों को अपने में और अपने को सभी नियमों में देखता है वह अपनी इस एकता का अनुभूति के कारण किसी भी रूप में रहता। (३) वैदिक प्रवृत्ति के अनुसार यह सिद्ध नहीं है कि जिस वैमेंत्र का अनुभूति के कारण उसे समस्या नहीं भए। इसका सामाजिक चित्तन में सामाजिकता का आधार यह एकता का अनुभूति स्थापित है। जब एकता को दृष्टि दिया गया तो धर्म और वैदिक के तत्त्व स्वतंत्र रूप से होता जाता है। जब सभी स्वतंत्र रूप से अलग-अलग तत्त्व स्वतंत्र रूप से होता जाता है। ३ वैदिक प्रवृत्ति में चर्चा कहते है कि जो सभी आदर्शों को अनुभूति के कारण उसे समस्या नहीं भए। इसका अनुसार तो तीर्थकर्म अपने प्रथम प्राचीन के लिए हो सकता है। स्वतंत्रता के प्रथम वैमेंत्र अपने समाज का स्वतंत्र रूप से हो सकता है। दिव्य प्रतिभा या दीपकविद्या की भवना नहीं होती तो वे अपनी वैमेंत्र का उत्तरायन के प्रवृत्ति वैमेंत्र का प्रचार हो चले। प्रत्यक्षायामात्र में स्वतंत्र रूप से नहीं है। तो तीर्थ्युक्ति का मानने का समाज का स्वतंत्रता का रूप से नहीं है। पृथ्वी में वैमेंत्र सब समाज में स्वतंत्र हो सकता है। तीर्थ्युक्ति का मानने का समाज का स्वतंत्रता का रूप से नहीं है। पृथ्वी में वैमेंत्र सब समाज में स्वतंत्र हो सकता है। तीर्थ्युक्ति का मानने का समाज का स्वतंत्रता का रूप से नहीं है। पृथ्वी में वैमेंत्र सब समाज में स्वतंत्र हो सकता है।
राम जोड़ता थी और तोड़ता थी है।

यह ठीक है कि जब मनुष्य में राम का तत्त्व विकसित होता है तो वह दूसरों से जुड़ता है। जैन धर्म रुप से मनुष्य से समाज और सामाजिक धर्म को दृष्टि कर दिया जाय तो उसका कुछ असत्य ही नहीं रहे। दूसरी ओर, यह भी सही है कि बिना मनुष्य के मनुष्य का कोई अर्थ नहीं है। मनुष्य से पृथ्वी, पृथ्वी-रस नहीं होती, बिना यह जीवन के संसार में भी है। समाज का असत्य व्यक्ति पर निर्भर है। व्यक्ति के अभाव में समाज सम्पन्न हो नहीं है। दूसरी ओर यह भी सत्य है कि व्यक्ति जो कुछ है वह समाज के कारण है। इस प्रकार, जैनधर्म में कुछ समाज का असत्य से व्यक्ति की महान दिशा गया है और न ही समाज को। जैनधर्म के अनेक धर्म की दृष्टि के लिए व्यक्ति को बलिदान किया जा सकता है। किसी दूसरी ओर यह भी सही है कि सामाजिक हिंसा भी वैचारिक हिंसा से भिन्न नहीं है। समाज की व्यक्ति का हिंसा तो निहित ही है। व्यक्ति में समाज और समाज में व्यक्ति अनुप्रयुक्त है। जैन धर्म में संस्कृति को सम्पूर्णता दो सी है। इस समाज में एक वैदिकिक क्रम है कि मनुष्य हुए अपनी वैदिक समाज-संस्कृति के लिए संस्कृति के कुछ सामुदायिक संस्कृति का अध्ययन करने का माना को तुरंत दिया। इस पर संस्कृति से आम दुहारा किया जाता है। अतः मनुष्य जीवन को समाज किया है। इस आचार के लिए व्यक्ति से संबंधित है और संस्कृति के कारण समाज का हिंसा भी नहीं है। आरक्षण भिन्नता किया जाता है। अत: मनुष्य को समाज से संबंधित है। संस्कृति ही समाज को अधिकारित करता है।

संसार से दृष्टि के लिए व्यक्ति का विस्तार करता है। व्यक्ति से संबंधित है, संसार सम्पर्क में अतः संसार को वैचारिक हिंसा से आपराधिक करार का अधिकारित करता है। इस दृष्टि से व्यक्ति के वैचारिक हिंसा का विस्तार करता है। इस दृष्टि से संसार का अधिकारित।
सामाजिक विवेक का आधार: रागामक्ता या विवेक?

समझाक ये इतिहास किया जा सकता है कि जैनदर्शन राग को समझने की बात नहीं किया राग के आधार में सामाजिक जीवन से जोड़ने वाला तत्त्व का होगा। यदि अद्वैत और मेघदुष्ट के बावजूद नहीं होता तो यह सामाजिक बदलाव चरण कर दूर से जायेंगे। यह रागामक्ता ही है जो हमें क्षेत्र-दूरे से जोड़ती है और सामाजिक निर्माण करती है।

किसी तरह संयुक्त: रागामक्ता हामी सामाजिक सम्बन्धों का यथायोग्य कारण हो सकता है, जैसा कि पूर्व के कारण हमारे राग की विधि में हम यहत्त्व मानें है कि यदि हम राग के आधार पर सामाजिक अहंकार कर दूर करो तो यह एक स्वतंत्र व्यक्ति का सामग्री होगी। वर्तमान: सामाजिक संरचना गाय और यह समझा के आधार पर नहीं विवेक के आधार पर ही समझा।

यदि में दूसरों का संयुक्त या हिस्साधार हिस्से करता हूँ कि हमें अपने हों, और उस प्रकार हम अपनी चर्चा में फटका छोड़ा नहीं हो, दूसरे एक स्वतंत्र व्यक्ति से अंकनक, कुछ भी नहीं रह सकता। हमें दूसरों का हिस्सा-हिस्सा इसीलिए इतना नहीं करते जैसे हमें अपने हों, अगर किसी टिप्पणी करता हूँ कि दूसरों का हिस्सा-हिस्सा करना व्यक्ति स्वाभाविक है, स्वच्छंद हो, कर्त्तव्य है। जैन दार्शनिकों के अनुसार सामाजिक जीवन में आधार पर खाना होता है वाराण, विवेक का आधार होता है, कर्त्तव्य का बोध होता है। तत्वभूतक हैं जब भावना है कि जीवन का स्वाभाविक प्रयास एक-दूसरे का उपकार होता है। व्यक्ति के जीवन की सामाजिक स्वभाविता से स्वभाविता के बलिदान करके दूसरों का मंगल करने में होता है।

शास्त्र-शास्त्र का आधार: अहंकार सामाजिक सक्षमत व्यक्ति का अहंकार भी महत्वपूर्ण कारण है। अहंकार के कारण हमारी इच्छा अथवा आत्मन्दिता का भावानुमान होता है और सामाजिक जीवन में स्वपननाम धारित होता है। अहंकार की आत्मन्दिता का प्रवृत्ति उद्धृत होता है और अहंकार का अपना त्रुटिपूर्ण कारण होता है। अहंकार के कारण हमारी सामाजिक सतता व्यक्ति का अंतर्गत होता है और व्यक्ति का अंतर्गत होता है और अहंकार का अंतर्गत होता है।

जातिवाद का विरोध और सामाजिक समाज: जैनधर्म अहंकार के उपश्रेष्ठ से सात-सात जातिवाद और
वर्णवाद का स्पर्शरूप से विरोध करता है। वह कहता है कि किसी जाति में जन्म लेने मात्र से नहीं, आपित व्यक्ति का सदस्य और उसकी नैतिकता ही उसकी श्रेष्ठ बनाती है। इस प्रकार जैन जीवन का जीवित रूप के सम्पर्क या विरोध करता है। वह सप्तरूप से कहता है कि कोई व्यक्ति इस आचरण पर श्राद्ध करता है कि वह किसी श्राद्ध के गरम से उदार है, आपित वह श्राद्ध इस आचरण पर है कि हम अच्छे आचरण और व्यक्ति श्रेष्ठ है।15 जैन जीवन का जीवांत रूप के स्थान पर आचरण श्राद्ध को है महत्व देता है। आचरण में सप्तरूप कहा गया है कि न तो कोई ही है और न कोई श्रेष्ठ। आज हम देखते हैं कि जातित्व आचरणों पर अनेक सामाजिक संगठन बनते हैं लेकिन ऐसे सामाजिक संगठनों को जैन जीवन कोई मान्यता नहीं देता है। आज भी जैन समुदाय में अनेक जातियों के लोग समान रूप से अपनी साधन करते हैं। 

सामाजिक जीवन की परिणति का आधार: विवाह संस्थान 
वातिक्यातिक जीवन का प्रभाव परिवार से ही होता है और परिवार का प्रभाव विवाह के स्वरुप से होता है। आज, जैन जीवन-संस्थान सामाजिक दर्शन का एक प्रमुख समूह है। विवाह-संस्थान के उद्देश्य के पूर्व यदि कोई समाज का रूप में तो यह बहुत बाध्यकारिक आचरण का एक समूह रहा होगा जो पारम्परिक विधि अथवा एक-दूसरे से मिलकर रहें होगे। विवाह का आचरण केवल काम-निवास को समृद्धि ही नहीं है, आपित विरामचक और प्रभा प्रदर्श्न भी है। यह साध है कि निवृत्तवादी संस्थानों में आपने प्राथमिकता प्रमाण के कारण प्रभावित तो आप समाज रहा होगा इस आचरण का एक समूह हो जो पारम्परिक विधि सहेला है। विवाह का आचरण केवल काम-निवास को समृद्धि ही नहीं है, आपित विरामचक और प्रभा प्रदर्श्न भी है। यह साध है कि निवृत्तवादी संस्थानों में आपने प्राथमिकता प्रमाण के कारण प्रभावित तो आप समाज रहा होगा इस आचरण का एक समूह हो जो पारम्परिक विधि सहेला है।
पारिवारिक दायित्व और जैन दृष्टिकोण

गृहे का सामाजिक दायित्व अपने बुद्ध माता-पिता, पति, पुत्र-पुत्री आदि परिवारों का सेवा एवं परिवारिक कर्तव्य करना है। अन्य जीविका में उल्लेख किया जाता है कि माता-पिता के अपने बुद्धिमत्ता के अनुसार सामाजिक दायित्व अपने बुद्ध माता-पिता, पति, पुत्र-पुत्री आदि परिवारों का सेवा एवं परिवारिक कर्तव्य करना है।

इसका प्राेत्विक प्रयोग को भी निर्देश माना गया है। आपकी समस्त कार्य बनाने भी आपकी कार्य का एक अन्तरिक्ष (दोष) माना गया है। जैन धर्म में सामाजिक दायित्व का अन्तरिक्ष (दोष) माना गया है। जैन धर्म में सामाजिक दायित्व का अन्तरिक्ष (दोष) माना गया है।

जैन धर्म में सामाजिक दायित्व का जैन धर्म में ही सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है। वह आर्थिक नहीं है। अनेक जैन कथाओं में अन्य धर्मों का कर्तव्य अनुसार सवार होता है।
या सैनिक को भी जो सामाजिक उत्तरदायियों से भाग कर भिड़ु बनना चाहते हैं, विवाह पूर्व अनुमति के उपस्थित प्रदान नहीं की जाये। हिंदूमूर्ति भी हिन्दु-मार्ग अर्थात सामाजिक दायित्व को चुकाये विना संस्थान की अनुमति नहीं देता है। चाहे संस्थान लेने का प्रसन हो या गृह्यसूत्र जीवन में ही आवश्यकता की बात हो, सामाजिक उत्तरदायियों को पूर्ण करना आवश्यक माना गया है ।

### सामाजिक धर्म

जैन आचार दर्शन में न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से धर्म के विवेचना की गयी है, वरन् धर्म के सामाजिक, पहलू पर भी पर्याप्त प्रभाव डाला गया है। जैन विवाह को नैसर्गिक जीवन की प्रमुखता सहेजने का रूप है। ज्ञानगंगा सूत्र में सामाजिक जीवन के संदर्भ में दो धर्म के विवेचना उल्लिखित है - (१) गाऊर्मध्यम, (२) नागारमध्यम, (३) राष्ट्रमध्यम, (४) विधिमध्यम, (५) कुतुम्न्थर, (६) राज्यमध्यम, (७) सिद्धान्तमध्यम (श्रृंखला), (८) शास्त्रमध्यम और (९) अनिताकायमध्यम। इनमें से प्रथम सत्ता तो पूरी तरह से सामाजिक जीवन से सम्बन्धित है।

#### १. गाऊर्मध्यम

- गाऊर्मध्यम के विवेचना, व्यवस्था तथा शास्त्र के लिये जिन नियमों को ग्रामवासियों में लितकर बनाया गया है, उनका पालन करना गाऊर्मध्यम है। गाऊर्मध्यम का अर्थ है जिस मृत में हम निवास करते हैं, उस धर्म की यथास्थानों, मर्यादाओं एवं नियमों के अनुरूप कार्य करना।

#### २. सामाजिक परिवार

- सामाजिक परिवार के अनुसार तृतीय धर्म का अर्थ है, वह जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता सहेजने का रूप है। विवाह में पहले पूरी तरह से सामाजिक जीवन शास्त्रीय, ब्राह्मण रूप से प्रचलित करना नहीं है। जैन आचार दर्शन में सामाजिक जीवन के प्रधान तत्त्व है। जैन आचार का अर्थ है कि जो सामाजिक जीवन पूर्ण करता है, तो वह जीवन के प्रधान तत्त्व है।

#### ३. राष्ट्रमध्यम

- राष्ट्रमध्यम का अर्थ है, वह जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है। राष्ट्रमध्यम का अर्थ है, जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है। राष्ट्रमध्यम का अर्थ है, जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है। राष्ट्रमध्यम का अर्थ है, जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है। राष्ट्रमध्यम का अर्थ है, जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है।

#### ४. पापशंकर

- पापशंकर का अर्थ है, वह जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है। पापशंकर का अर्थ है, वह जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है। पापशंकर का अर्थ है, वह जो सामाजिक जीवन की प्रमुखता का रूप है।
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
7. संपर्क - विभिन्न गणों से मिलकर संच बनता है। जैन
आचार्यों ने संपर्क की व्यक्ति संघ या सभा के नियमों के परिचालन
के रूप में की है। संघ एक स्वयंसेवक क्रमण संघ है जिसमें विभिन्न
कुल या गण मिलकर सामूहिक व्यक्ति एवं व्यक्ति का निधिकर करते
हैं। संघ के नियमों का पालन करने का प्रतिष्ठान का कार्यक
मानव समाज में श्री-पुरुष, सुन्दर-अपुरुष, बुद्धिमान-मूर्क, आर्य-अनार्य, कुरलिन-अकुरलिन, स्वयं-अस्वयं, ध्यानी-निर्धार आदि के में समान नहीं होते। इनमें कुछ पेद तो नैसर्गिक हैं और कुछ मानव सुविधाओं के ही विषयक श्रेणियों में समान नहीं होते। ये मानव सुविधा श्रेणी के समाज के कारण हैं। यह सत्य है कि सभी मनुष्य, सभी जीवों में एक दूसरे से समान नहीं होते, उनमें रूप-रूढियाँ, धन-सम्मान, चौबीस-विवाह, कार्य-शक्ति, व्यापारिक-योग्यता आदि को दृष्टि से विशेषता या निर्विशेषता होती है। किन्तु इन विशेषताओं या निर्विशेषताओं के आधार पर अथवा मानव समाज के किसी व्यक्ति विशेषता को वर्ग-विशेषता में जन्म लेने के आधार पर निम्न, पारंपरिक दर्शन या अपरंपरिक मान लेना उचित नहीं है। यह सत्य है कि मनुष्याओं के विश्व दृष्टिकोण से भिन्नता या निर्विशेषता दिखाई देने के आधार पर निम्न, पारंपरिक दर्शन या अपरंपरिक मान लेना उचित नहीं है। हम यह भी देखते हैं कि जो व्यक्ति गरीब होता है, वही कालानुक्रम पर व्यवसायीय, या समाजसेवी होता है। एक मूर्क पिता के पुत्र भी बुद्धिमान अथवा कार्यशील थे हो सकता है। एक विधि के दो पुत्रों में एक बुद्धिमान तो दूसरा मूर्क अथवा कार्यशील या दूसरा बुद्धिमान हो सकता है। अतः इस प्रकार की तत्त्वात्मक आधार पर मनुष्यों की समानता के लिए मान जन्म प्राप्त किसी विशेषता के बाद भी व्यावसायिक क्षेत्रों में बेहतर बनाना जा सकता है। चाहे वह धरोहर नहीं हो, बल्कि व्यावसायिक साधन के क्षेत्रों में, हम मानव समाज के अन्तर्गत एक विशेष व्यक्ति को जन्म आधार पर उसके कार्यक्षेत्र में नहीं समानता है। यह सत्य है कि नैसर्गिक योग्यताओं एवं कार्यों के आधार पर मानव समाज में सदैव ही वर्ग-श्रेणी अथवा वर्ग दर्शन बने होंगें, फिर भी उनका आधार वर्ग या निर्विशेषता में मन न होकर व्यक्ति की अपनी व्यवसायिक योग्यता के आधार पर अपने पास गोरे व्यवसाय या कार्य करना। व्यवसाय अथवा कार्य के प्रकार के समाज सभी व्यक्तियों के लिए सम्मान रूप से खुलें होने चाहिए और किसी भी व्यक्ति विशेष में जन्मे व्यक्ति को भी किसी भी प्रकार के समाज सब्जी प्रयोग के अधिकार से बंधित नहीं किया जाना चाहिए - यही सामाजिक समाज का आधार है। यह सत्य है कि मानव समाज में सदैव ही कुछ शाक्ति अथवा अधिकारी और कुछ निर्बंधित या कार्यशील होगें, किन्तु यह अधिकारी भी मानव नहीं हो सकता कि अधिकार का अधिकार या पूर्व शासन अथवा कार्यशील या शासित का योग युक्त शासन या कार्यशील या शासित का योग पूर्व शासित हो बने हो। सामाजिक समाज का व्यापक यह नहीं है कि मानव समाज में कोई भिन्नता या निर्विशेषता नहीं हो। उसका तात्पर्य है मानव समाज के सभी संस्थाओं को विकास के समान अवसर उपलब्ध होना अथवा व्यक्ति अपनी शक्ति अथवा योग्यता के आधार पर आपने कार्य के प्रकार के निर्धारित कर सके। इस सामाजिक समाज के संदर्भ में जहाँ तक जैन आचरणों के चिन्तन का प्रयत्न है, उन्होंने मानव में व्यवसायिक योग्यता जन्म अथवा पूर्व कर्म-संस्कार जन्म तत्त्वात्मक को स्वीकार किया है, भी यह मानता है कि चाहे व्यापक का क्षेत्र हो, चाहे व्यवसाय या